दाईं सूँड़ के गणेशजी

जयंत विष्णु नारलीकर

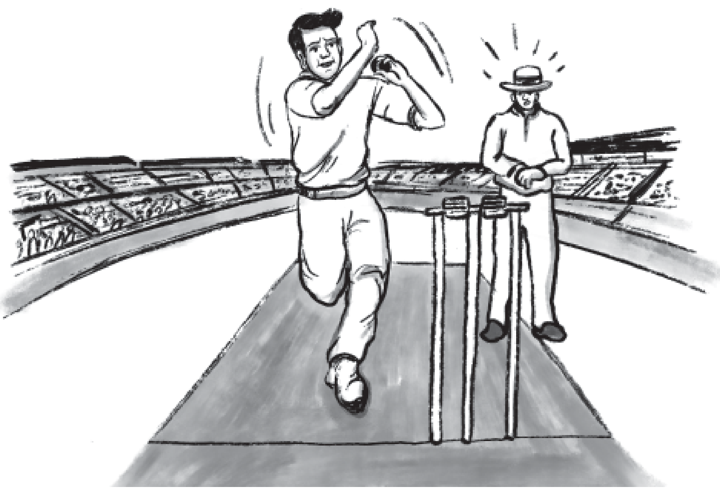

21 दिसम्बर, सन् 2004

आज करीब पन्द्रह वर्षों के पश्चात् मैं क्रिकेट का मैच देखने ग्राउण्ड पर गया था। सच पूछें तो क्रिकेट मेरा प्रिय खेल है। हमारी कॉलोनी के क्रिकेट क्लब में छुट्टी के दिन मैं अवश्य खेलने जाता हूँ। यदि समय मिलता है तो टी.वी. पर मैच देखना भी पसन्द है मुझे, खासकर पाँच दिवसीय टेस्ट मैच देखने को मेरा मन करता है। सारा दिन मैदान में जाकर क्रिकेट देखने का मेरा शौक पूरा नहीं हो पाता क्योंकि मैं म्यूज़ियम क्यूरेटर का काम करता हूँ। हाँ, समय मिलने पर मैं वीडियो रिकॉर्डर पर क्रिकेट मैच के महत्वपूर्ण अंश अवश्य देख लेता हूँ।

परन्तु आज की बात और है। मेरे बचपन के दोस्त प्रमोद रांगणेकर के खेल का आज अन्तिम दिन है। इसके बाद वह क्रिकेट से रिटायर होने वाला है। उसने यह कहकर मुझे सीज़न टिकट भिजवाया था कि एकाध दिन तो मैच देखने अवश्य आ जाना। उसके आत्मीय निमंत्रण को स्वीकारना ज़रूरी था मेरे लिए। प्रमोद

बॉलर था इसलिए मैंने भारत की फील्डिंग वाला दिन चुना।

आज मैच का दूसरा दिन था। पहले दिन भारत ने पहली पारी में सिर्फ 308 रन बनाए थे और उसके सारे खिलाड़ी आउट हो गए थे। इस श्रृंखला का यह अन्तिम और निर्णायक मैच था। क्रिकेट के सभी भारतीय शौकीनों को यकीन था कि इंग्लैंड पर विजय प्राप्त करने का मौका भारतीय खिलाड़ी हाथ से जाने नहीं देंगे। टॉस जीतकर भारत पहले बल्लेबाज़ी कर पाँच-छः सौ रन ज़रूर बना लेगा। भारत के बॉलरों की बॉलिंग का, इंग्लैंड के खिलाड़ियों को बखूबी अन्दाज़ा हो गया था - उनकी अच्छी प्रैक्टिस हो गई थी। क्रिकेट के मँजे हुए विशेषज्ञों का तो यह मत था कि प्रमोद रांगणेकर के साथ कुछ अन्य मौजूदा बॉलरों को 'ड्रॉप' कर देना चाहिए। परन्तु, इस निर्णायक मैच में चयन बोर्ड नए बॉलरों को आज़माने का जोखिम लेने को तैयार न था। विशेषज्ञ अब यही कह रहे थे कि इंग्लैंड की टीम पहली पारी के 308 रनों को आसानी-से पार कर लेगी।

एम.सी.सी. की बल्लेबाज़ी आरम्भ हुई। सलामी जोड़ी संयम से क्रीज़ पर डटी रही और पहले एक घण्टे के खेल में उन्होंने बिना कोई विकेट खोए 40 रन बना लिए। ड्रिंक्स के पश्चात् कैप्टन भण्डारी ने, रांगणेकर को बॉलिंग करने को कहा। उसका यह आखिरी मैच होने की वजह से, दर्शकों ने तालियों से उसका स्वागत किया। किसे पता था कि आगे क्या होने वाला है?

रांगणेकर का प्रस्ताव सुन अम्पायर कालिया चकित रह गए। हुआ यूँ कि रांगणेकर हमेशा 'राइट आर्म ओवर द विकेट' बॉलिंग करता था और उसी हिसाब से अम्पायर बल्लेबाज़ को हिदायत देने ही वाले थे कि रांगणेकर ने उनसे कहा कि "मैं लेफ्ट आर्म ओवर द विकेट बॉलिंग करने वाला हूँ।" और उसी हिसाब से फील्डिंग की पुनर्रचना करवाई।

कप्तान भण्डारी को भी इस बात की कल्पना न थी कि रांगणेकर बाँए हाथ से बॉलिंग करेगा। उसे भी आश्चर्य हुआ। इससे पहले रांगणेकर ने कभी भी बाएँ हाथ से बॉलिंग नहीं की थी। अतः इस महत्वपूर्ण घड़ी में उसका यह निर्णय कप्तान भण्डारी को जँचा नहीं। परन्तु, किसी खिलाड़ी को बॉलिंग देने के पश्चात् उसे मना नहीं किया जा सकता! इसके अलावा यह रांगणेकर के जीवन का अन्तिम मैच था। 'अभी एकाध ओवर डालने में कोई हर्ज़ नहीं,' मन ही मन ऐसा निर्णय कर भण्डारी ने उसे 'शुरु करो' का संकेत किया और वहीं से उस अभूतपूर्व घटनाचक्र का आरम्भ हो गया।

जिस खिलाड़ी को दाहिने हाथ से बॉलिंग करने का अभ्यास है, वह एकाएक बाएँ हाथ से बॉलिंग कैसे

कर सकेगा? ऐसी बॉलिंग सटीक एवं प्रभावशाली कैसे होगी भला? सभी इसी उलझन में फँसे थे। रेडियो तथा टी.वी. के कमेण्टेटर इसी बात को दोहरा रहे थे कि भारत को यह ओवर बड़ा महँगा पड़ेगा। यह चर्चा एवं अटकलें चल ही रही थीं कि रांगणेकर की पहली बॉल ने इंग्लैंड के खिलाड़ी की लेग स्टम्प उखाड़ दी। वह खिलाड़ी पैविलियन लौटते समय नए बल्लेबाज़ से बोला, "गेंद बड़े अनपेक्षित तरीके से आ रही है। सम्भल कर खेलो!" वह नया खिलाड़ी दो ही बॉल खेल पाया और तीसरी बॉल पर आउट हो गया। और रांगणेकर के महँगे साबित होने वाले ओवर की अन्तिम गेंद पर इंग्लैण्ड का कैप्टन हेडली भी पैविलियन की राह लौट गया।

रांगणेकर की दाहिने हाथ की गेंदबाज़ी का इंग्लैंड के खिलाड़ियों को बखूबी अनुभव था, परन्तु इस गेंदबाज़ी के आगे उनकी एक न चली। उनकी पहली पारी 78 रन पर तो दूसरी पारी सिर्फ 45 रनों पर सिमट गई। उनके एकमात्र बाएँ हाथ के बल्लेबाज़ जोंस ने कुछ जूझने की कोशिश की इसीलिए इतने रन बन पाए अन्यथा पारी इससे पहले ही सिमट गई होती। रांगणेकर की बॉलिंग का विश्लेषण तो अभूतपूर्व ही था।

पहली पारी: 15 ओवर, 5 मेडन, 20 रन और 10 विकेट।

दूसरी पारी: 10 ओवर, 3 मेडन, 15 रन और 10 विकेट।

यह मैच चायपान से पहले ही समाप्त हो गया। बधाई देने वाले तमाम प्रेक्षकों से बचने के लिए रांगणेकर को 'पुलिस एस्कॉर्ट' दिया गया। जब संवाददाताओं ने उसे घेरा तब यह कहते हुए कि "मैं बहुत थक गया हूँ......कल मुलाकात होगी," वह मैदान से बाहर निकल गया और एक बन्द एम्बुलैंस में बैठकर नौ दो ग्यारह हो गया। एम्बुलैंस में सफेद झक कपड़े पहने एक व्यक्ति पहले से बैठा था जिसे संवाददाताओं ने अस्पष्ट-सा देखा था। उन्होंने पूछताछ की तो पता चला, वह कोई डॉक्टर था।

करीब एक हफ्ते रांगणेकर गायब था। भारतीय टीम, क्रिकेट कन्ट्रोल बोर्ड, पुलिस आदि सभी उसके ठौर-ठिकाने से अनभिज्ञ थे। एम्बुलैंस बेनाम थी जो शहर के किसी भी अस्पताल अथवा नर्सिंग होम से सम्बन्धित नहीं थी। परन्तु, किसी अज्ञात व्यक्ति ने एक सन्देश पुलिस तथा बड़े-बड़े अखबारों के पास भिजवाया था जिसमें रांगणेकर ने लिखा था,

"मैं सुरक्षित हूँ और 28 दिसम्बर के दिन मिलूँगा।"

इस दौरान क्रिकेट के तमाम शौकीन लोग, समीक्षक आदि उस अभूतपूर्व मैच की समीक्षा एवं विश्लेषण में जुट गए। 'इंडियन रोप

ट्रिक', 'जिम लेकर का सवाया', 'क्रिकेट या मेस्मेरिज़्म' आदि शीर्षकों के अन्तर्गत रांगणेकर की बॉलिंग की खूब चर्चा हुई। उसकी गेंदबाज़ी को स्लो मोशन पर कई बार जाँचा गया। परन्तु क्रिकेट के जानकारों को 'थ्रोइंग' अथवा अन्य कोई भी दोष नज़र न आया। उसे हर पहलू से 'मँजा हुआ खिलाड़ी' ही पाया गया। परन्तु, सभी इस उलझन में पड़े थे कि रांगणेकर अचानक बाएँ हाथ से कैसे खेल पाया?

28 दिसम्बर को रांगणेकर एक पुलिस स्टेशन में जा पहुँचा। पिछले पूरे हफ्ते वह कहाँ था, उसे बिलकुल याद नहीं आ रहा था। इतना ही नहीं, उसे अपने बेजोड़ पराक्रम का भी ज्ञान न था। वैसे तो उसमें कोई शारीरिक दोष न था, और 21 दिसम्बर से पहले तथा 28 दिसम्बर के बाद का, उसे सब कुछ याद था। इतना ही नहीं, अपनी बाएँ हाथ की बॉलिंग की बात भी उसे हास्यास्पद ही लगी। इसी वजह से, उसके पराक्रम की गुत्थी सुलझ नहीं पाई और अफवाहों का बाज़ार गर्म हो गया।

21 दिसम्बर से 28 दिसम्बर के दौरान रांगणेकर के जीवन में क्या घटित हुआ होगा भला? जब मैंने सत्य को जाना तब समझ में आया कि कुछ बातें कितनी विचित्र और कितनी असाधारण हो सकती हैं।

* * *

5 फरवरी, 2005 का दिन मेरे लिए अविस्मरणीय सिद्ध हुआ। उस दिन सुबह आठ बजे, मेरे मित्र सँजू गोले

का फोन आया। करीब पाँच वर्षों बाद मैं उसकी आवाज़ सुन रहा था।

"प्रताप, आज रात मैं तुम्हें मिलने आ सकता हूँ क्या? नौ बजे के करीब? बहुत ज़रूरी काम है।"

"अवश्य आओ! खाना यहीं खा लेना। मैंने आग्रह किया। पर, यह तो बताओ कि आज मुझे कैसे याद किया?"

"प्रमोद के बारे में कुछ बात करनी है। और भी बहुत कुछ बताना है। पर यह सारी चर्चा 'गुप्त' रखनी है। और किसी को खाने पर मत बुलाना।"

"ठीक है, ठीक है! और कुछ?" मैंने मज़ाक में पूछा।

"हाँ! भाभी से कहना कि मुझे खाना खाने में काँटा-छुरी की ज़रूरत पड़ती है।" इतना कहकर सँजू ने फोन रख दिया।

सँजू, प्रमोद और मैं एक ही स्कूल में पढ़े। साथ-साथ बचपन बिताया। हम तीनों की तिकड़ी स्कूल में प्रसिद्ध थी। हम तीनों जिगरी दोस्त थे पर हमारे स्वभाव सर्वथा भिन्न थे। हमारी रुचि भी अलग-अलग विषयों में थी। मैं कोमलहृदय था और मुझे कलात्मक विषयों में रुचि थी। सँजू बिलकुल शान्त स्वभाव का, कम बोलने वाला लड़का था और उसे विज्ञान तथा गणित विषय अच्छे लगते थे। प्रमोद बड़ा ही हंसमुख और खेलकूद में गहरा रस लेने वाला था।

कॉलेज तक की पढ़ाई हमने साथ-साथ की। आगे चलकर प्रमोद ने बैंक में नौकरी कर ली और क्रिकेट में नाम चमकाया। मैंने एक विख्यात म्यूज़ियम में क्यूरेटर का काम सम्हाला। और सँजू? विज्ञान में उच्च शिक्षा प्राप्त कर डिफेन्स की प्रयोगशाला में काम करने लगा और वहाँ के गोपनीय रिसर्च प्रोजेक्ट में वह इस कदर खो गया कि एक ही शहर में रहते हुए, हम दोनों की मुलाकात पिछले कई वर्षों से नहीं हो पाई थी।

उसके शब्दों का मान रखने की मेरी पुरानी आदत थी, सो मैंने उसके आदेश का पूरा-पूरा पालन किया। किसी और को खाने पर बुलाने के मोह को मैंने टाला। मेरी पत्नी ने विदेशी पद्धति का भोजन बनाया (जिसे काँटा-छुरी से खाया जा सकता था)। यूँ भी उसकी हमेशा शिकायत होती थी कि पश्चिमी किस्म का खाना बनाने का मौका उसे कम ही मिल पाता है। सँजू के लिए उसने प्रॉन-कॉकटेल, काकोव्हाँ तथा क्रेप सुजेट्स वाला बढ़िया फ्रांसीसी खाना बनाया।

सँजू प्रमोद से सम्बन्धित क्या कहने वाला है, इसी को सोचते-सोचते मेरा सारा दिन बीत गया। प्रमोद को लेकर अनेक लोगों ने अनेक उल्टी-सीधी चर्चाएँ की थीं - अब सँजू और क्या बताने वाला है! परन्तु साथ ही, यह विचार भी मन में आया कि वैज्ञानिक दृष्टि रखने वाला, बहुत

कम बोलने वाला सँजू जब खुद उसके बारे में बात करना चाहता है, तब अवश्य ही कोई खास वजह होगी। उसके आने तक मेरी उत्सुकता चरम सीमा पर पहुँच गई थी।

नियत समय पर दरवाज़े की घण्टी बजी और सँजू का आगमन हुआ। किसी परिचित को बहुत वर्षोपरान्त देखने के बाद उसमें जो बदलाव नज़र आते हैं, वैसे ही थोड़े-बहुत बदलाव संजय में भी नज़र आए। वह पहले से अधिक प्रौढ़ एवं गम्भीर प्रतीत हुआ। परन्तु, मुझे ऐसा भी प्रतीत हुआ कि कोई और बदलाव भी निश्चित रूप से उसमें आया है। परन्तु उस बदलाव को मैं पकड़ नहीं पा रहा था। उसकी बातचीत के ढंग और पुरानी यादों के किस्सों में, मैं इस मुद्दे को भूल-सा गया।

खाना अच्छी तरह सम्पन्न हो गया। पिछले पाँच वर्षों में क्या करते रहे... क्या-क्या खोज निकाला, अनुसन्धान कैसा है आदि-आदि मेरे तथा पत्नी के पूछे प्रश्नों के उसने गोल-मोल जवाब दिए। वह हम दोनों से ही अधिक बुलवाने की कोशिश करता रहा। पत्नी की पाक-कुशलता, उस स्वादिष्ट भोजन का मेरे मोटापे से सम्बन्ध, हमारे बच्चों की पढ़ाई-लिखाई, पत्नी का सोशलवर्क आदि विषय पत्नी को चर्चा हेतु उकसाने के लिए काफी थे। उस बातचीत से मैं सन्तुष्ट नहीं था। मुझे गहरी आशंका ने घेर लिया कि सँजू अपने बारे में कुछ भी कहने में टाल-मटोल कर रहा है। दूसरी बात यह कि हमेशा भोजन से जल्दी निबटने वाला सँजू, आज इतनी धीमी गति से क्यों खा रहा है! उसकी नज़र पहले बड़ी गहरी होती थी, वह आज स्वप्निल

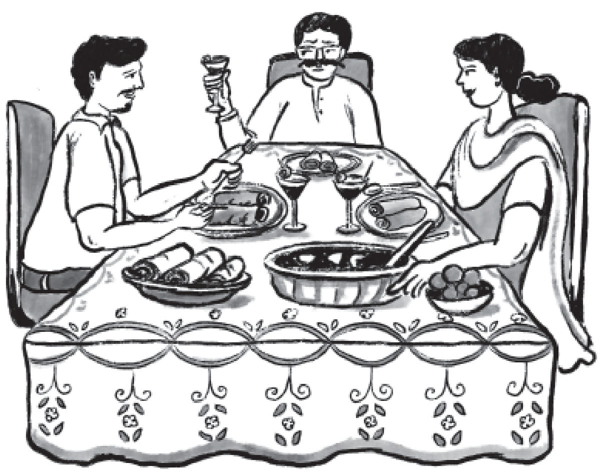

क्यों लग रही है?....इस प्रकार की अनेक आशंकाएँ मेरे मन में उठ रही थीं जिन्हें मैं अनदेखा कर रहा था।

पर, भोजन समाप्त होते-होते एक अजीब बात हो गई जिसने मेरी आशंकाओं की पुष्टि कर दी।

मेरा बारह वर्षीय बेटा अरुण कहानियों की एक किताब ले आया। पाँच वर्ष पहले उसकी और सँजू की गहरी दोस्ती थी। वह पुस्तक आगे बढ़ाते हुए बोला,

“सँजू चाचा, पिछली बार यह किताब आपने मुझे उपहार में दी थी। पर आप भी इतने भुलक्कड़ हैं कि आपने पुस्तक पर लिखा, ‘प्यारे अरुण को सप्रेम भेंट’ और उसके नीचे अपने हस्ताक्षर ही नहीं किए! अब कर दीजिए...”

सँजू ने किताब को अनदेखा कर दिया और लौटाते हुए कहा, “बेटा अरुण, मैं आज साइन नहीं कर सकता। आज मेरी आँखों में दर्द है। अगली बार कर दूँगा...”

“सिर्फ साईन ही तो करने हैं, सँजू! बहाने क्यों भला? हस्ताक्षर तो आदमी आँख मूँदकर भी कर सकता है!” मैंने संजय को छेड़ा।

“ऐसी कोई बात नहीं है प्रताप! डॉक्टर ने लिखने की पूरी मनाही की है। देखो अरुण, जब अगली बार आऊँगा तब हस्ताक्षर तो करूँगा ही, पर एक नया प्रेज़ेण्ट भी साथ लाऊँगा।”

अरुण कुछ निराश-सा हो गया।

इसके पश्चात् सँजू और मैं अपने स्टडी रूम में गुप्त चर्चा के लिए चले गए। स्टडी का दरवाज़ा बन्द करते ही मैंने अपने मन में उठ रहे प्रश्न को पूछ डाला, “प्रमोद के सम्बन्ध में क्या कहने वाले थे तुम?”

सँजू आराम-से आरामकुर्सी पर बैठते हुए बोला, “रुको ज़रा, प्रताप!” मुझे बहुत कुछ कहना है तुमसे! इस दौरान प्रमोद की बात अपने आप आ ही जाएगी। पहले इस चीज़ के प्रति अपने विचार बताओ...”

इतना कहकर सँजू ने अपनी जेब से एक पैकेट निकाला और बड़े एहतियात से उसे खोला।

उस पैकेट से गणेशजी की प्रतिमा निकली। नर्तन करती गणेश प्रतिमा, जिससे मैं परिचित था क्योंकि ऐसी ही प्रतिमा हमारे म्यूज़ियम में भी थी। जानकारों का कहना था कि वह प्रतिमा पेशवाओं के समय की है, और वह शनिवारवाड़ा के महल में पेशवा के पूजाघर में बिराजती थी। वह मूर्ति हमारे म्यूज़ियम में किस तरह से आई, इसका एक लम्बा इतिहास है। वैसे उससे हमें कुछ लेना-देना नहीं है परन्तु, वैसी ही प्रतिमा सँजू के पास कैसे आई होगी? नहीं, क्षमा करें... फर्क था ज़रा-सा, दोनों प्रतिमाओं के बीच। यह गणेशजी दाईं सूँड धारण किए हुए थे।

दाईं सूँड वाले गणेशजी दुर्लभ अवश्य हैं पर अस्तित्व में हैं। फिर भी पेशवा के समय की, दुर्लभ और दाईं सूँड की प्रतिमा सँजू ने कहाँ से प्राप्त की होगी? यह नकली नहीं है, इसे मेरी पारखी नज़र ने तुरन्त परख लिया था। फिर भी मैंने अपने उपकरणों द्वारा उसे जाँच-परख लिया। वह नकली प्रतिमा नहीं थी।

"कहिए क्यूरेटरजी! है कि नहीं, दुर्लभ वस्तु?" मुस्कराते हुए सँजू ने पूछा।

"हाँ! वाकई! वह इतनी दुर्लभ है कि उसके नकली होने की आशंका उठी मेरे मन में। परन्तु यह असली है, अब इसका यकीन हो गया है मुझे। मेरे म्यूज़ियम में इसी प्रकार की गणेश मूर्ति है, पर बाईं सूँड वाली!" मैंने कहा।

"वाकई?" सँजू के इस प्रश्न में आश्चर्य से अधिक मज़ाक की भावना थी। वह आगे बोला, "किसी समय फुरसत से दिखा देना मुझे। पर, मुझे शक है कि ऐसी प्रतिमा तुम्हारे पास होगी! सुनो, इस गणेशजी को अपने

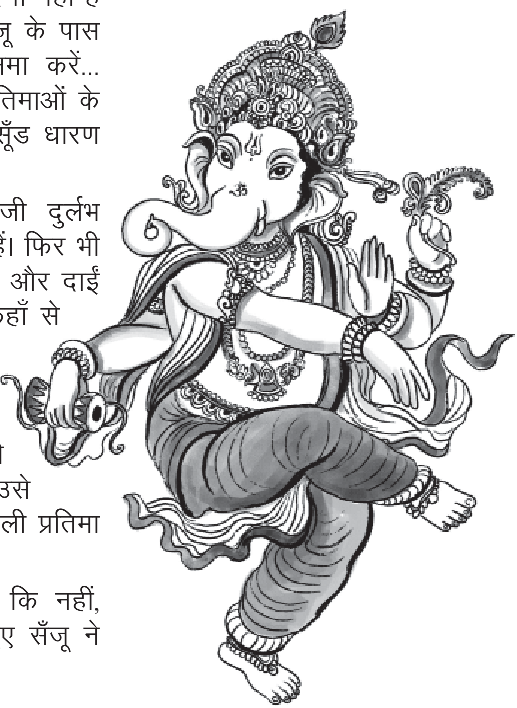

म्यूज़ियम में मेरे उपहार के तौर पर रख लो।"

"म्यूज़ियम के ट्रस्टीज़ की ओर से मैं तुम्हारा आभारी हूँ, सँजू! उनका पत्र तुम्हें मिलेगा ही... पर तुम नहीं जानते कि कितनी मौलिक वस्तु दे रहे हो म्यूज़ियम को तुम!" मेरी आवाज़ भर्रा गई थी। "पर क्या तुम मुझे बता सकते हो कि ये गणेशजी तुम्हें कहाँ मिले? म्यूज़ियम में आई ऐसी दुर्लभ वस्तुओं के प्रति सभी के मन में जिज्ञासा बनी रहती है।"

"वही बताने जा रहा हूँ मैं! पर, इस जानकारी को गुप्त रखना होगा और इसका सम्बन्ध प्रमोद से भी है..." सँजू बोला।

गणपति के झमेले में मैं मूल मुद्दे को करीब-करीब भूल ही गया था। सँजू की बात सुनकर मेरा कौतूहल अब और बढ़ गया था।

"गणेशजी की कथा से पहले मैं तुमसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ, प्रताप! तुम मेरे बचपन के मित्र हो। यदि तुमसे कोई यह पूछे कि सँजू की पहचान के लिए उसके शरीर पर कोई निशान है क्या, तो क्या जवाब होगा तुम्हारा?"

इस प्रश्न से मेरा कौतूहल और भी बढ़ गया। प्रमोद की गेंदबाज़ी, दाईं सूँड वाले गणेशजी और सँजू का उक्त प्रश्न! क्या मतलब है इस सब का? मेरा तो दिमाग चकरा गया। फिर भी सँजू के प्रश्न का जवाब था मेरे पास।

"तुम्हारी बाईं भुजा पर तितली जैसा निशान है! याद है, मैं और प्रमोद इस बात को लेकर कितना मज़ाक उड़ाते थे तुम्हारा!"

सँजू ने अपनी शर्ट की आस्तीन ऊपर उठाकर बाईं भुजा को दिखाया। उस बाँह पर से वह जन्म-निशान गायब था। मेरा दिमाग चकरा गया, तब सँजू ने हौले-से दाहिनी भुजा की ओर संकेत किया...

वह निशान वहाँ बना था। मेरा दिमाग चकराने लगा।

"ओय प्रताऽऽऽप! उठ भैय्या...!" सँजू मुझे होश में लाने की कोशिश में लगा था। पलभर के लिए मुझे लगा कि जैसे मैं नींद से जाग रहा हूँ। या मैं किसी स्वप्न में हूँ। दरअसल, सँजू से बातें करते-करते मैं बेहोश हो गया था।

"सॉरी! मेरी बातों का तुम पर इतना गहरा प्रभाव पड़ेगा, यह नहीं जानता था मैं! मैं ज़िन्दा... हाड़-माँस का जीता-जागता सँजू हूँ...भूत नहीं!"

"तब तुम्हारा जन्म-निशान कैसे बदल गया?" मैंने डरते-डरते पूछा। इसके जवाब में सँजू ने मेरी हथेली को हौले-से अपनी छाती पर घुमाया। उसका दिल दाहिनी ओर धड़क रहा था!

अब मेरी समझ में कुछ-कुछ आने लगा। प्रमोद की बाईं गेंदबाज़ी, दाईं सूँड वाले गणेशजी, दाहिनी ओर धड़कता सँजू का दिल... यह सब

कहीं तो आपस में जुड़ा है। मन में एक अत्यन्त विचित्र-सा विचार कौंध गया कि ये सब आईने में बन रहे प्रतिबिम्ब तो नहीं होंगे? मैंने गणेश मूर्ति को छुआ था। सँजू को टटोला था। बल्लेबाज़ों को आउट करवाते प्रमोद को सिर्फ मैंने ही नहीं... हज़ारों ने देखा था। और तो और... निर्जीव टी.वी. ने भी देखा था! वे सारे मात्र आईने के प्रतिबिम्ब नहीं थे बल्कि सत्य रूप से उजागर हुईं घटनाएँ थीं।

फिर भी मैंने सँजू को आईने के सामने खड़ा किया और तुरन्त मेरी आशंका दूर हो गई। आईने वाला सँजू मुझे अधिक परिचित लगा। प्रतिबिम्ब से हम सिर्फ इतना ही जान सकते हैं कि हम कैसे लगते हैं। परन्तु प्रत्यक्ष और प्रतिबिम्ब में थोड़ा-सा फर्क होता ही है। अपने अन्तर्मन में इसी फर्क को मैंने महसूस किया था। आज मेरे घर आया सँजू, मूल सँजू न होकर, मात्र एक जीती-जागती प्रतिमा थी... पर यह कैसे सम्भव हुआ होगा? और मूल सँजू कहाँ गया होगा भला?

"तुम्हें लग रहा है कि मैं कोई और हूँ... जो संजय की प्रतिमा बन आया हूँ?" सँजू ने अथवा उस 'जीव' ने मेरी विचार श्रृंखला को ठीक ही पहचान लिया था। "नहीं! मैं असली सँजू ही हूँ... सिर्फ मेरा रूपान्तर मेरे प्रतिबिम्ब में हो गया है।"

"ऐसा कैसे हो सकता है भला?"

"वही बताने मैं यहाँ आया हूँ। जो कुछ मैं बताने जा रहा हूँ, वह सत्य है... चाहे तुम विश्वास करो या न करो! पर उसे अपने तक ही सीमित रखना होगा तुम्हें!"

...जारी

जयंत विष्णु नारलीकर (1938): प्रबुद्ध वैज्ञानिक और विज्ञान कथाकार। कैंब्रिज से गणित में डिग्रियाँ हासिल करने के बाद उन्होंने खगोल-विद्या और खगोल-भौतिकी में विशेष प्रावीण्य प्राप्त किया। किंग्ज़ कॉलेज के फेलो और इंस्टिट्यूट ऑफ थिओरेटिकल एस्ट्रोनॉमी के संस्थापक सदस्य के रूप में कुछ समय कैंब्रिज में रहे। IUCAA (Inter-University Centre for Astronomy and Astrophysics), पुणे के संस्थापक सदस्य। नारलीकर 'पद्मभूषण' और 'पद्मविभूषण' सहित कई राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित हैं।

सभी चित्र: श्रेया टी.एस.: एनिमेटर और इलस्ट्रेटर हैं। कम्यूनिकेशन डिज़ाइन में विशेषज्ञता के साथ एनआईडी से स्नातक किया है। बच्चों की कहानी की किताबों और कॉमिक्स पर काम करना बेहद पसन्द है। इन्हें अपने बचपन की कहानियों और अपने दैनिक जीवन में देखी जाने वाली कहानियों से प्रेरणा मिलती है।

यह कहानी सन् 2013 में *विज्ञान प्रसार* द्वारा प्रकाशित जयंत विष्णु नारलीकर के विज्ञान कथाओं के संकलन *कृष्ण विवर और अन्य विज्ञान कथाएँ* से साभार।